Research Antiquity - A Reference Book of Historical Perspective
ISBN : 978-93-93166-08-1

छत्तीसगढ़ में रामनामी सम्प्रदाय का उद्भव विकास एवं परम्परागत जीवन संस्कृति

डॉ. देवनारायण बंजारे
सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष
इतिहास विभाग
शास. एम.एम.आर. स्नातकोत्तर
महाविद्यालय
चांपा छ.ग., भारत

सारांश

छत्तीसगढ़ प्राकृतिक वैभव से परिपूर्ण गौरवमयी अतीत को समेटे हुए हैं। छत्तीसगढ़ के विविध सामाजिक और सांस्कृतिक रचना धरातल के गर्भ में छिपे रहस्यों से अनजान है जिसे उजागर करने की आवश्यकता है। छत्तीसगढ़ लोक जीवन एवं लोक संस्कृति का महत्वपूर्ण स्थान है छत्तीसगढ़ के संस्कृति की विशिष्ट पहचान है। सांसकृतिक बौद्धिकता का परिचायक है लोक जीवन का प्रमुख आधार है। छत्तीसगढ़ का लोक साहित्य कुछ लिखित और कुछ अलिखित। यहाँ द्रविण एवं आर्य संस्कृतियों का संगम स्थल है। आदिम रीति रिवाजों के साथ-ही-साथ सामाजिक संरचना, आस्था, सामाजिक परम्पराएं, उत्सव, त्यौहार, मेलों के साथ वैदिक कालीन ग्रंथ- रामायण आदि में विद्यमान है। दक्षिण प्रदेश गमन के लिए छत्तीसगढ़ से गुजरने के कारण इस पथ का नामकरण- 'दक्षिणापथ' पड़ा। ऐसा कहा जाता है दक्षिणापथ जाते

समय भगवान श्री राम का पद् चिन्ह छत्तीसगढ़ प्रदेशों पर पड़ा था।

छत्तीसगढ़ प्रदेश में जाति प्रथा, अंध विश्वास, ढ़ांेग बाह्य आडंबरों ने घेर लिया था। पूरा समाज इनकी धार्मिक ग्रंथों पर सामाजिक व्यवस्था से ओत-प्रोत थी। समाज में ऊँच-नीच की भावना के फलस्वरूप भारत में भक्ति आन्दोलन व सामाजिक सुधारवाद का सूत्रपात हुआ था। ऐसी विकट परिस्थिति में छत्तीसगढ़ में एक 'रामनामी' सम्प्रदाय का उदय हुआ था।

छत्तीसगढ़ में निवास करने वाले रामनामी सम्प्रदाय रमनमिहा, रमरमिहा के नामों से जाने जाते हैं जो वर्तमान में रायगढ़, सारंगगढ़, घरघोड़ा, बिलासपुर, रायपुर, चांपा, मालखरौदा, चन्द्रपुर, बलौदा बाजार, कसडोल, भाटापारा, सराईपाली और महासमंुद महानदी के तटवर्ती क्षेत्रों में लगभग 300 गांव निवास करते है। छत्तीसगढ़ के तटस्थ राज्य उड़ीसा व बिहार में भी बड़ी संख्या में लोग निवास करते हैं। लगभग 5 लाख लोग रामनामी सम्प्रदाय के अनुयायी है। पवित्र चित्रोत्पल गंगा नदी के निवासरत् लोग किसी देशकाल में अपनी घर द्वार जमीन नहीं छोड़ते। इस वर्ग के लोग अपना अभिवादन राम-राम कहकर करते हैं। इनके मूलवंश हरियाणा के नार नौल से मानते हैं।

रामनामी सम्प्रदाय का उद्भवः-

छत्तीसगढ़ में रामनाी सम्प्रदाय के उद्भव उस समय हुआ जब समाज तथाकथित उच्च वर्ग की अवहेलना से तंग आ चुके थे। विशेषकर मंदिरों में जाने एवं धर्मग्रंथों रामायण की पाठ करने पर ऐतराज किया जाने लगा। ऐसे समय रामनामी सम्प्रदाय के लोगों ने

हिन्दू वर्गों का विरोध स्वरूप स्वयं को न सिर्फ राम के रंग में रंग लिया बल्कि मंदिर-मूर्ति से दूर निराकार ब्राम्ह राम को स्तंभ के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने कहा- न मंदिर चाहिए और न मूर्ति। इनके तो रोम-रोम में बसे हंै राम। राम की भक्ति में लीन यह रामनामी समाज। जिस प्रकार गुरूद्रोणाचार्य ने एकलव्य को शिष्य के रूप स्वीकार न करने पर मूर्तिस्थापित कर शिक्षा प्राप्त किया और एकलब्य विश्व के प्रमुख धनुरधर में सर्वोपरि रहा है। स्वर्णिम अक्षरों में नाम अंकित है उसी प्रकार आज "रामनामी सम्प्रदाय" स्वर्णिम सर्वोपरि है। यह आन्दोलन अंग्रेजों द्वारा किये जाने वाले धर्मांतरण से मुक्ति दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

रामभक्ति की सांस्कृतिक विशेषताओं से परिपूर्ण, यह वर्ग पूर्णतः अहिंसावादी, शाकाहारी और श्रम के प्रतिनिष्ठावान है। पहले यह वर्ग सतनाम पंथ का अनुयायी था। यह वर्ग उन्नत लालट, ओजस्वी चेहरा, गठीला बदन, कड़कदारवाणी बड़ी नुकीले मंुछे आर्य संस्कृति के अभिन्न अंग का आभास कराती है। रामनामी सम्प्रदाय के नारी अपने अनुपम सौन्दर्य एवं निष्ठा के लिए प्रतिष्ठित है। नारी का स्वभाव प्राकृतिक रूप से तेज होते है। इनका मुख्य व्यवसाय कृषि और व्यापार करना है। रामनामी सम्प्रदाय सरकारी दस्तावेजों में भूराजस्व रिकार्डों में सतनामी जाति अंकित है। ये निर्गुन निराकर राम के उपासक है इनकी जीवन संस्कृति में राम रचे-बसे हैं ये हृदय सरल सादगी जीवन जीने वाले हैं। माथे में राम नाम की गोदना, सिर पर मुकुट लगाये हाथ में मंजिरा लिए इस पंथ के लोग अपना तंबू बनाकर रात-दिन रामनाम

का भजन करते हैं तथा इनके ओढ़ने पहनने के वस्त्रो में भी *रामनाथ* लिखा होता है ये सम्प्रदाय के लोग मृत्युकर्म पर अस्थि विसर्जन पवित्र-चित्रोत्पला गंगा पर करते हैं। वैसे रामनामी समाज में शव को दफन करने की प्रथा है लेकिन विशेष परिस्थितियों में जलाने का भी विधान है।

रामनामी अपने कर्मकांडों के लिए भी किसी का मोहताज नहीं है। इनके लिए पंडितों की जरूरत नहीं होती। इनके पारस्परिक सद्भाव और संगठन शक्ति को देखकर तत्कालीन मालगुजार भय खाते थे। इस संगठन के प्रभाव को कुचलने के लिए मालगुजार इलाहाबाद से पंडे बुलाए। जिला-जांजगीर-चांपा के मालखरौदा विकासखण्ड अंतर्गत ग्राम चारपारा में एक शिशु का जन्म हुआ तो नाचते-गाते उसके मस्तक पर रामनाम अंकित कर मालगुजार ने घोषणा की, कि राम पंथ का अनुसरण करें। यह घटना सन् 1900 से 1909 के बीच मानी जाती है। इस षड्यंत्रकारी घटना में रामनामी सम्प्रदाय सतनामी से अलग हो गया।

रामनामी समाज का प्रवर्तक

रामनामी समाज का प्रवर्तक श्री परसराम को माना जाता है। 1904 में निर्गण निराकार ब्रम्ह के प्रतीक मानकर एक जन आन्दोलन का शुरूवा किया था। परसराम ने तत्कालीन मध्यप्रांत और बारार के जिला सत्र न्यायालय से इस संबंध में कानून अधिकार भी प्राप्त कर लिये थे। सत्र न्यायाधीश ने अपने फैसले में लिखा था कि ये लोक निर्गुण निराकार ब्रम्ह के प्रतीक राम के पुजारी हैं और पूजा लिए स्वतंत्र

हैं। इनके जन्म विवाह के कर्मकाण्डों में स्वयं करते थे इनके लिए पंडितों की आवश्यकता नहीं होती थी। राम की भक्ति का यह अनुठा उदाहरण विश्व में कहीं और नहीं मिलता।

किवंदती

एक किवंदती के अनुसार जांजगीर-चांपा के पास मालखरौदा कलमी नामक गांव में एक युवक बालमुकंुद रहता था। वह खरसिया के पास बोतल्दा की गुफा में दस वर्ष तक तपस्या में लीन रहे। दस वर्ष पश्चात् रिद्धि-सिद्ध द्वारा परीक्षा लिया जिसमें मुकुंद असफल रहे फलस्वरूप रिद्धि-सिद्ध ने उसे आदेशित किया कि वह चारपारा के आसपास के मैदानी इलाके में जागरण राम-राम का भजन करें आज्ञा मानकर एक कुटीया बनाकर रहने लगे-

राम-राम के भजन बिना, तोर जनम अबिरथा माना।
जमपुर हबका खाने मना, राम नाम के भजन बिना॥

मुकंुद आगे चलकर राम के परम भक्त हो गये। इसी समय 1895 ई. में परशराम व ओड़काकन के मालगुजार-शिवा ने मुकंुद के परम भक्त बन गए और गोदना गोदने वाली गोदहारिन द्वारा राम-राम गोदना गोदवाया और प्रचार-प्रसार हेतु सदैव समर्पित रहा।

जनश्रुति के अनुसार:-

भादो मास में सात रामनामियों मिलकर ओड़काकन से पिरदा जा रहे थे। महानदी पार करने हेतु सातों रामनामीयों गिधौरी से शिवरीनारायण नाव घाट में नाव से सवार होकर पारकर रहे थे तभी मजधार में नदी की प्रवाह तेज होने लगी और नाव डगमगाने लगा।

ISBN : 978-93-93166-08-1

सभी भक्तों राम पुकार करने लगे फलस्वरूप कुछ समय पश्चात् वर्षा थम गयी। तब से अपने जीवन राम को जीवन समर्पित करने लगे जिसे लोग चमत्कारीत समझने लगे। सतनामी समाज के बुद्धजीवियों इतिहासकार कहते हैं कि जिस समय मझधार में नाव डगमगाने लगी जिसमें इलाहाबाद के पंडे भी सवार थे उसके द्वारा सम्मोहन विद्या का प्रयोग किया जाने वाला षड्यंत्रकारी था जो सतनामी समाज को बांटने का कार्य किया था इस समय छत्तीसगढ़ अंचल में गुरू घासीदास के विचारों का प्रभाव दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। इसके प्रचार-प्रसार को रोकना मुख्य उद्देश्य था।

रामनामी मेले का प्रारंभ

प्रथम रामनामी मेला 11 जनवरी 1909 में पिरदा में हुआ और दूसरा मेला 1910-11 में पुनः पिरदा में आयोजित हुआ। तीसरा मेला 1912 मंधाईभाठा में भजन मेला का आयोजन हुआ था। तब से निरंतर प्रतिवर्ष मेला पौष महिने के शुक्ल के एकादशी से त्रयोदशी तक तीन दिवसीय मेला का आयोजन होता है अब तक 108 वर्ष हो गये इस वर्ष मेला में देश-विदेश के मेहमान शिरकत हुए हैं।

रामनाम की गोदना कैसे गोदाते हैं

1. शिरोमणी - माथ पर राम-राम दो बार लिखे जाने वाले।
2. सर्वागरामनामी - पूरे माथे पर लिखाने वाला।
3. नखशिखा रामनामी - पूरे शरीर पर राम लिखाने वाला।

तीन सुईयों से बांधकर गोदहारिन द्वारा रामनाम का गोदना गोदवाते हैं।

मेले का आकर्शण:-

रामनामी पंथ

1.रामनामी चैत में - संत समागम

2.दूसरा पौष एकादशी से त्रयोदशी - बड़ा भजन यह मेला महानदी तट पर एक बार उत्तर व दूसरा वर्ष दक्षिण में मेला लगता है। विभिन्न लोग गांवों से नारियल लेकर न्यौता देने आते हैं। मेले का आयोजन संबंधित ग्राम पंचायत करती हैं जिस गांव का नारियल आमंत्रित कर लिया जाता है और मेले के तैयारी संबंधी व्यवस्था/समिति बनायी जाती है। पूरे गांव मेले का आयोजन सामूहिक रूप से होता है। गांव के हर-एक व्यक्ति चांवल, दाल, लकड़ी रूपये पैसे इत्यादि दान देते है। मेले स्थल पर 21 फूट रामनाम का जैतखाम बनाया जाता है जिसमें राम का नाम खुदा रहता है। पहले सराई की लकड़ी का बनाया जाता था किन्तु आज कालान्तर में ईंट-सीमेंट क्रांकीट की सहायता से पक्के स्तंभ बनाया जाता है। इस अवसर पर चबूतरा में रामनाम का मानस रखा जाता है। रामधुन गायन हेतु वाद्ययंत्र केवल घुंघरू, मंजिरा रहता है और अन्य यंत्र वर्जित है। मेले में भंडारा का आयोजन होता है जिसे भक्तगण लाई, घी, नारियल, मिठाई इत्यादि अपिर्त करते हैं। यहाँ के भंडारा से प्राप्त प्रसाद प्राप्त कर अपना मनोवांच्छित इच्छा को पूरा करते हैं। यह मेले मानवीय संवेदनाओं से परिपूर्ण होता है जिसमें धार्मिक सहिष्णुता का अनुपम उदाहरण देखे जा सकते हैं। मेले में सामूहिक विवाह किया जाता है।

मेले के आयोजन हेतु 1960 ई. से गुरू प्रथा की शुरूवात हुई

है। पंचों का नामंकन होता है। 8 गांवों का अपना एक प्रतिनिधि होता है, किन्तु इसके पहले गुरू शिष्य श्री परम्परा नहीं होती थी सभी बराबर होते थे। अतिथि के प्रति बड़े ही विनम्र भाव से विदा अर्पित करते हैं। रामनामी समाज द्वारा लिया गया साक्षात्कार स्मृति पर आधारित- श्रीमती गनेशीबाई (सिघरा) श्री कुनकूराम, डॉ. बी.आर. महिपाल साहित्यकार, श्री भारद्वाज गुरूजी (पिरदा) भले ही रामनाम को जप करते हैं। शरीर में *रामनाथ* लिखवाते हैं लेकिन, इनकी आस्था न तो अयोध्या के राम से है न ही मंदिरों की मूर्तियों में। बल्कि इनका राम तो हर एक मनुष्य, जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधे और समस्त प्रकृति में समाया हुआ है।

निःसंदेश आज विश्व में राम भक्त के अनुपम उदाहरण और कहीं नहीं मिलता। रामनामी संप्रदाय आज संकट में है। समाज से जुड़े अवधराम जी कहते है रामनामी सम्प्रदाय का वजूद समाप्त होती जा रही है। इनकी संस्कृति, जीवन शैली, परम्पराओं को आधुनिक रंग में रंग गये हैं जिसे संरक्षण की नितंत आवश्यकता है, जिससे हमारी ऐतिहासिक धरोहर बनी रहे।

संदर्भ ग्रंथसूची

1. *रामनामी समाज द्वारा लिया गया साक्षात्कार का अंश।*
2. *डॉ. बी.आर महिपाल, सहा. प्रा. हिन्दी- द्वारा ली गई साक्षात्कार।*
3. *विभिन्न पत्र-पत्रिकाएं - नवभारत।*
4. *अन्य स्त्रोत।*